अनजान रिश्ता

रमेश पोखरियाल

हिन्दी ADDA

अनजान रिश्ता

https://www.hindiadda.com/anajaan-rishta/

गाड़ी के हार्न की आवाज आई तो उसका ध्यान स्वतः ही घड़ी की ओर चला गया। साढ़े नौ बज चुके थे। वहे तैयार तो हो चुकी थी लेकिन नाश्ता नहीं किया था। जल्दी में एक टोस्ट मुँह में ठूँसा और पर्स हाथ में लेकर बाहर निकल आई।

इस शहर में आए उसे एक सप्ताह हो चुका था, लेकिन अभी तक व्यवस्थित नहीं हो पाई थी। सुरभि एक निजी कंपनी में मेडिकल के पद पर कार्यरत थी। कंपनी का एक ऑफिस इस शहर में भी था और वह हफ्ते पहले ही स्थानांतरित होकर यहाँ आई थी।

स्थानांतरण पर एक बार तो मन हुआ नौकरी छोड़ दे। लेकिन सिद्धांत के समझाने पर चली ही आई। उसका कहना भी ठीक था जब बच्चे छोटे थे और उन्हें हमारी जरूरत थी तब तो हम नौकरी छोड़ नहीं पाए। अब जब बच्चे अपने में व्यस्त हैं और घर में कुछ खास करने को नहीं तो नौकरी छोड़ने का क्या औचित्य है।

वैसे भी कंपनी ने एक फर्निश्ड मकान लीज पर लेकर दिया था। कोई परेशानी नहीं। सुबह कंपनी की गाड़ी लेने आ जाती, शाम को छोड़ जाती। सिद्धांत स्वयं आकर सब देख गया था।

'कुछ दिन देख लो। ठीक लगे तो बता देना। मैं भी स्थानांतरण के लिए आवेदन कर दूँगा।' जाते-जाते सिद्धांत कह गए थे।'

सिद्धांत सरकारी नौकरी में थे। इस शहर में भी उनका तबादला हो सकता था। वैसे भी अकेले रहने की इच्छा सुरभि की भी नहीं थी।

यूँ तो शहर ज्यादा बड़ा नहीं था लेकिन महानगरीय सभ्यता धीरे-धीरे यहाँ भी हावी होने लगी थी। जिस क्षेत्र में सुरभि रह रही थी वह हिस्सा कभी शहर से अलग-थलग था। कुछ एकांतपसंद लोगों ने बड़े-बड़े भूखंड लेकर उनमें मकान बनाए थे। चारों तरफ हरियाली और उसके बीच ये कॉटेजनुमा मकान।

धीरे-धीरे शहर बढ़ा और शहरी विकास इस क्षेत्र की सुंदरता को भी लील गया। जमीन की कीमतें बढ़ी तो लोगों ने अतिरिक्त जमीन को बेच दिया जिसे प्रॉपर्टी डीलरों ने हाथों-हाथ खरीद कर उसे छोटे-छोटे प्लाट में विभक्त कर बेच दिया। अब तो वह क्षेत्र भी कंकरीटों का जंगल सा लगता था।

लेकिन फिर भी क्षेत्र के पुराने सौंदर्य का बखान करती कुछ कोठियाँ अभी भी मौजूद थी। ऐसा ही एक घर सुरभि के घर के बगल में भी था। आम, लीची के पेड़ों के उन झुरमुटों के बीच उसकी लाल-लाल खपरैल ही नजर आती, आते-जाते सुरभि की

निगाह कई बार उस घर की ओर चली जाती, लेकिन कभी कोई प्राणी नजर नहीं आया उसे।

'कितने भाग्यशाली हैं ये लोग जो प्रकृति के इस सुरम्य वातावरण में रहने का लुत्फ उठा पाते हैं।' सुरभि मन ही मन सोचती।

रविवार का दिन। सुरभि फुरसत में थी। थोड़ी देर से उठी और चाय पीने बाहर छत पर आकर बैठ गई। स्वतः ही बगल वाले घर की ओर निगाह चली गई। अधेड़ उम्र की एक महिला माली को कुछ हिदायत दे रही थी। साथ ही स्वयं भी फूलों के पौधों की कतारों में से कुछ पुष्प गुच्छ तोड़ रही थी। गुलदस्ते में सजाने के लिए तोड़ रही होगी। घर की मालकिन होगी शायद, सुरभि ने सोचा।

तभी एक अन्य व्यक्ति व्हील चेयर पर एक अति वृद्ध पुरुष को वहाँ पर ले आया। इस महिला के श्वसुर होंगे। पिता भी हो सकते हैं। सुरभि मन ही मन अनुमान लगा रही थी। कुछ देर तक सुरभि उनके क्रियाकलाप देखती रही फिर अंदर चली गई।

रविवार बीता तो सुरभि फिर अपने काम में व्यस्त हो गई। आते-जाते फिर कभी बगल वाले घर में निगाह चली ही जाती लेकिन फिर कोई न दिखाई दिया।

रात के नौ बजे एक दिन घर की घंटी बजी तो सुरभि चौंकी। कौन आ गया इस समय? कहीं अस्पताल में कोई इमरजेंसी तो नहीं आ गई? इन्हीं आशंकाओं में डूबती उतराती सुरभि को निर्मला ने आकर सूचना दी - 'कोई मिलने आई है आपसे।'

निर्मला पास ही की बस्ती में रहती थी और सुबह से शाम तक सुरभि के घर पर रह उसका काम करती। खाना बनाकर अब जाने की तैयारी में ही थी कि घंटी बज गई। आगंतुक कोई महिला है। लेकिन कौन हो सकती है इस वक्त? सुरभि गाउन का फीता बाँधती बाहर चली आई।

'माफ कीजिएगा। आपको इस वक्त परेशान किया। लेकिन परिस्थिति ही ऐसी आ गई थी। मेरे ससुरजी की तबियत अचानक बिगड़ गई है और मैं अकेली हूँ इस वक्त।' परेशानी से उसके माथे पर पसीने की बूँदें छलक आई थी।

सुरभि ने कुछ न पूछा। उन्हें बैठने को कह कपड़े बदलने अंदर चली गई। पाँच मिनट में ही अपना बैग हाथ में उठाये सुरभि बाहर निकल चुकी थी।

'आप भी सोचेंगी जान न पहचान और रात गए आपसे यूँ परेशान कर दिया। आपके पड़ोस में ही रहते हैं हम।' इस वक्त सुरभि को परेशान करने की लाचारी उसकी बातों से झलक रही थी।

'कैसी बात कर रही हैं आप? डॉक्टर का ये तो कर्तव्य होता है।' सुरभि ने उसके अपराध बोध को दूर करने का भरसक प्रयास किया। तो ये हैं हमारी पड़ोसी और जो वृद्ध सज्जन उनके साथ दिखाई दिए थे वह इनके श्वसुर हैं, पति कहीं बाहर होंगे शायद और बच्चे, वह भी बाहर ही होंगे।

अपने ही खयालों में डूबती उतराती सुरभि उस घर में प्रवेश कर गई। सीधे ही उनके शयन कक्ष में पहुँची। वृद्ध तेज ज्वर से तड़प रहे थे। गीली पट्टी उनके माथे पर थी जो माथे पर रखते ही थोड़ी देर में सूख जाती। पास ही खड़ा एक व्यक्ति पट्टियाँ बदल रहा था। उन दोनों के पहुँचते ही वह एक ओर खड़ा हो गया।

'घबराने की कोई बात नहीं, वायरल है। दो-तीन दिन लगेंगे ठीक होने में।' सुरभि ने उस महिला को सांत्वना दी और कुछ दवाइयाँ लिख दीं।

'इन्हें आप कल सुबह ही मँगा सकती हैं। अभी जो दवाई मैंने दी है उससे इनका बुखार उतर जाएगा। और रात को चैन से सो पाएँगे।' बाहर निकलते हुए उसने उस महिला से कहा।

अब सुरभि का ध्यान उस घर की आंतरिक सजावट पर गया। कलात्मक फर्नीचर, लकड़ी का सजावटी सामान, पुरानी मूर्तियाँ, पूरा घर ही उसे एंटीक लगा। मन ही मन गृहस्थियों की कलात्मक रुचि की प्रशंसा करते हुए सुरभि वापस चली आई।

अगले दिन सुरभि घर लौटी तो उसके लगभग एक डेढ़ घंटे बाद पड़ोस की गृहस्वामिनी एक बार फिर उपस्थित थी, उसका धन्यवाद प्रकट करने के लिए। साथ में अपने बगीचे के ताजे फूलों का गुलदस्ता भी साथ था।

'दरअसल ससुर जी अल्झाइमर से पीड़ित हैं। उम्र भी काफी हो चुकी है। इसलिए थोड़ी सी बीमारी में ही घबरा जाती हूँ मैं।'

'और आपके पति?'

'वह अब इस दुनिया में नहीं है।' कहते हुए उसने निगाहें झुका ली।

कुछ देर शांति पसरी रही। सुरभि की हिम्मत न हुई कि वह उसके बच्चों के बारे में कुछ पूछे।

बातों ही बातों में पता चला कि उसका नाम सुलक्षणा है और वह यहाँ स्थानीय डिग्री कॉलेज में अँग्रेजी की प्रोफेसर है।

'बस दो साल और उसके बाद रिटायर हो जाऊँगी।'

कुछ देर बैठकर वो चली गई लेकिन अपने व्यक्तित्व की स्पष्ट छाप वह सुरभि के मनोमस्तिष्क पर छोड़ चुकी थी।

अगले रविवार को अपने घर आने का निमंत्रण देकर वह चली गई तो सुरभि ने ये मौका अपने हाथ से न जाने दिया। अनजान शहर में अपनी इस पड़ोसन से जान पहचान बढ़ाने का कोई मौका नहीं छोड़ना चाहती थी सुरभि। इसके पीछे हरियाली के घने झुरमुटों के बीच रंग बिरंगे फूलों से महकते उस घर को बार-बार देखने का लालच भी था।

सुलक्षणा के ससुर अब पूर्णतया स्वस्थ थे लेकिन पुरानी अल्झाइमर के कारण उन्हें सँभालना कठिन हो जाता। ऊपर से नब्बे वर्ष से अधिक की उम्र। सुरभि मन ही मन इस महिला के जीवट की कायल हो गई।

धीरे-धीरे उसका उस घर में आना-जाना बढ़ता गया। लेकिन दोनों के बीच में एक आवरण था। एक खोल जिससे निकलने का प्रयास न सुरभि ने किया न ही सुलक्षणा ने।

'अपनी नई सहेली को पाकर तुम्हें तो हमारी आवश्यकता ही नहीं महसूस होती अब।' सिद्धांत ने मजाक किया तो सुरभि झेंप गई।

ठीक ही तो कहा सिद्धांत ने। आजकल हर समय फोन पर सुलक्षणा का गुणगान ही तो करती रहती है वह। अगले महीने तक सिद्धांत भी स्थानांतरित होकर आ जाएँगे तो फिर व्यस्त हो जाएगी सुरभि। तब कहाँ इतना मौका मिलेगा सुलक्षणा से मिलने का।

मिलना जुलना बढ़ा तो बहुत सी बातें भी होने लगी। और एक दिन सुरभि ने सुलक्षणा से उसके बच्चों के बारे में पूछ ही लिया।

प्रश्न सुनते ही सुलक्षणा के चेहरे के भाव ऐसे बदल गए जैसे खुले नीले आसमान में अचानक काले बादल घिर आए हों और वर्षा की बूँदें आँसू बनकर नयनों को भिगोने लगी हों।

सुरभि को अपने प्रश्न पर लज्जा हो आई। क्या आवश्यकता थी उसे यह सवाल पूछने की? क्यों उनके जख्मों को कुरेदा उसने? ऐसा लगता है या तो इनके बच्चे हैं ही नहीं या फिर उनसे जुड़े कुछ और जख्म खाए हैं इन्होंने। लेकिन थोड़ी देर की शांति के बाद इसका जो जवाब उन्होंने दिया इसकी तो सुरभि ने कल्पना भी न की थी।

'शादी ही नहीं हुई तो बच्चे कैसे?'

सुनकर सुरभि जैसे आसमान से गिरी। शादी नहीं हुई तो ससुरजी कहाँ से आए। शायद उसने कुछ गलत सुना होगा।

'हाँ सुरभि यही सच है। वर्षों से अपने सीने में दफन इस राज को तुमसे कहने का मन हो रहा है।' और सुलक्षणा ने अपनी कहानी सुरभि को सुना दी।

सुलक्षणा के पिता और अनुपम के पिता पुराने मित्र थे। दोनों का अपना-अपना व्यवसाय था। अनुपम के पिता ने पुरानी दोस्ती को रिश्तेदारी में बदलने की इच्छा जाहिर की तो किसी को कोई ऐतराज नहीं था। सुलक्षणा की माँ ने एक बार उसकी छोटी उम्र और पढ़ाई पूरी न होने का जिक्र किया था लेकिन पिता ने अपना ही घर कह तुरंत ही विवाह हेतु हामी भर दी।

अनुपम, सेठ दीनानाथ का इकलौता बेटा था। तीन वर्ष का था जब एक सड़क दुर्घटना में माँ की मृत्यु हो गई और पिता गंभीर रूप से घायल हो गए। तन के घाव तो भर गए लेकिन पत्नी की असमय मौत से मन पर पड़े घाव कभी न भर पाए। अनुपम की माँ और पिता दोनों की भूमिका निभाई दीनानाथ ने। अनुपम की छोटी उम्र को देखते हुए शुभचिंतकों ने दीनानाथ को दूसरा विवाह करने की सलाह दी लेकिन वह नहीं माने।

अब वही अनुपम पच्चीस-छब्बीस वर्ष का सुदर्शन युवक विदेश से मैनेजमेंट की पढ़ाई पूरी कर अपने पिता के व्यवसाय को बखूबी सँभाल रहा था। उसी अनुपम का रिश्ता जब सुलक्षणा के लिए आया तो पूरा परिवार खुशी से झूम उठा।

छुटपन से अनुपम को देखती आ रही सुलक्षणा को अचानक ही अपने रिश्ते बदल जाने का अहसास हुआ। लेकिन इससे वह नाखुश नहीं थी। इतना बदलाव उन दोनों के

संबंधों में अवश्य आया था कि पहले अनुपम ने निःसंकोच हँसी ठिठोली करने वाली सुलक्षणा अब उससे बात करने में शर्माने लगी थी।

दोनों के विवाह को अब एक माह शेष था। सेठ दीनानाथ उत्साहित थे। लगभग रोज ही होने वाली बहू सुलक्षणा से बात करते। उसकी रुचि-अरुचि को ध्यान में रख खरीददारी की जा रही थी। कभी सुलक्षणा को ही अपने पास बुला लेते।

'बेटे को तो काम से फुरसत नहीं तुम ही विवाह की तैयारी में मेरी मदद करो।' जब तब अनुपम की व्यस्तता की शिकायत सुलक्षणा से करना न भूलते दीनानाथ। विवाह से तीन दिन पहले ही अनुपम ने ऑफिस जाना बंद किया था। वह भी तब जब पिता गुस्सा ही हो गए थे उस पर।

लेकिन होनी को कुछ और ही मंजूर था। विवाह समारोह के लिए सिलवाई गई पोशाक अनुपम को फिट नहीं आई तो स्वयं ही अपने टेलर के पास पहुँच गया। वापस लौट रहा था लेकिन घर न पहुँच पाया। एक फोन आया और पिता बदहवास से अस्पताल पहुँचे। लेकिन तब तक सब कुछ समाप्त हो चुका था। पता चला गाड़ियों से लदा एक ट्रक सामने आते स्कूटर सवार को बचाने के प्रयास में अनुपम की मर्सिडीज के ऊपर पलट गया।

बुरी तरह घायल अनुपम को बड़ी मुश्किल से निकाल कर अस्पताल पहुँचाया गया। लेकिन उससे पहले ही अनुपम की साँसें टूट चुकी थी।

इतना बड़ा आघात कैसे सहा होगा सुलक्षणा ने? और उसके बाद ये इनके साथ कैसे? सुरभि का मन इस हृदयविदारक घटना को सुन भर आया। सुलक्षणा भी कुछ देर खामोश रही। शायद अपने आँसू रोकने का प्रयास कर रही थी। सुरभि ने भी कुछ न पूछा, थोड़ी देर बाद सुलक्षणा ने आगे बोलना आरंभ किया।

दोनों परिवारों पर तो जैसे बज्र गिर पड़ा था। सुलक्षणा के हाथों पर तो अभी मेहँदी का रंग ठीक से चढ़ा भी न था कि किस्मत ने उससे सब कुछ छीन लिया।

सुलक्षणा अपने शोक से उबरी तो उसे सबसे पहले अपने होने वाले श्वसुर का ध्यान आया उनके पास जाए या न जाए कुछ दिन इसी दुविधा में रही। अंततः मन कड़ा कर उनसे मिलने चली ही गई।

सेठ दीनानाथ तो अपना संतुलन ही खो बैठे थे। दिन रात अपने भव्य पूजागृह में ही भगवान की मूर्तियों के सामने बैठे एकटक उन्हें निहारते रहते। न खाने की सुध न सोने की। 'यह अन्याय उनके साथ ही क्यों?' शायद यही पूछते होंगे भगवान से।

सुलक्षणा सीधे उनके पूजा के कमरे में चली गई। कुछ देर तक अनजानी निगाहों से उसे देखते रहे। पहचानने की कोशिश करते लेकिन नहीं पहचान पाए तो मुँह फेर लिया।

उस दिन से सुलक्षणा ने नित्य उनके पास जाने का नियम बना दिया। डॉक्टरों के परामर्श और सुलक्षणा की सेवा सुश्रुषा से दीनानाथ जी में कुछ सुधार हुआ।

'बेटी मैं तुझे अपनी बहू नहीं बना पाया।'

सुलक्षणा को पहचानने के बाद उनके मुँह से निकला पहला वाक्य दोनों को आँसुओं से सराबोर कर गया।

मन ही मन इस हादसे से डरी सुलक्षणा आश्वस्त हुई। दीनानाथ जी के चेहरे पर कोई गिला शिकवा, किसी घृणा का नामोनिशान नहीं था।

अब सुलक्षणा अपना अधिकतम समय दीनानाथ जी की सेवा में ही गुजारने लगी थी। और धीरे-धीरे घर में इस बात का विरोध भी होने लगा था। लेकिन सुलक्षणा ने किसी की न सुनी।

पत्नी और बेटे को इस शहर में खो देने के बाद दीनानाथ जी का यहाँ रहने का मन न था। सारा व्यवसाय समेटने के बाद वह किसी दूरस्थ स्थान में शातिपूर्वक अपना जीवन बिताना चाहते थे।

औने पौने दामों में सब कुछ बेच अब वह वहाँ से जाने की तैयारी में थे।

'मैं आपको अकेला नहीं छोड़ूँगी। मैं आपके साथ चलूँगी।'

सुलक्षणा की बात सुन दीनानाथ जी चौंक गए। सुलक्षणा की ओर देखा। लेकिन उसके स्वर की दृढ़ता और चेहरे के भाव देख समझ गए कि वह अपने निश्चय से नहीं डिगने वाली। घर परिवार के बहुत से विरोधों को झेलने के बाद भी सुलक्षणा चली आई दीनानाथ जी के साथ इस अनजान शहर में। थोड़ा व्यवस्थित हुए तो दीनानाथ जी ने सुलक्षणा को आगे पढ़ने के लिए प्रेरित किया।

सुलक्षणा ने स्थानीय कॉलेज में प्रवेश ले लिया। पहले एम.ए. फिर पीएच.डी.। सुलक्षणा पढ़ती गई और अंततः दीनानाथ जी की जिद ने उसे महिलाओं के महाविद्यालय में नौकरी करने हेतु बाध्य कर दिया।

अनजान शहर में बहुत अधिक जान पहचान भी नहीं थी तो कोई बहुत प्रश्न भी नहीं करता। अधिकांश लोगों को यही पता था कि सुलक्षणा दीनानाथ जी के इकलौते पुत्र की विधवा पत्नी है।

जिसे भी पता लगता दोनों की प्रशंसा करते न अघाते। जहाँ विधवा बहू को पढ़ा लिखा कर योग्य बनाने हेतु दीनानाथ जी की प्रशंसा होती वहीं इतनी छोटी उम्र में विधवा होने पर भी ससुर की सेवा में अपना जीवन होम कर देने के लिए सुलक्षणा की भी।

'और तबसे लगभग चालीस वर्ष बीत चुके हैं। सब लोग यही जानते हैं कि हम ससुर-बहू हैं। लेकिन यह कोई नहीं जानता कि यह रिश्ता तो कभी अपनी पूर्णता तक पहुँचा ही नहीं।'

सुरभि हैरान थी। कुछ कहते न बना। सुलक्षणा के पास बैठे बहुत देर हो चुकी थी। अपनी ही सोच में डूबी सुरभि वापस चली आई। इस घोर कलयुग में ऐसा भी होता है क्या? जहाँ लोग खून के रिश्तों को भी नहीं निभा पाते वहाँ दीनानाथ जी और सुलक्षणा ऐसे रिश्ते को निभा रहे थे जो कभी बना ही नहीं।